17 जनवरी 2013, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-32 / 2012-14

जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के व्याख्यान प्रतिदिन अब आधे घंटे

जी-जागरण पर

प्रतिदिन प्रातः 6.30 से 7.00 बजे तक

वर्ष : 35, अंक : 20 सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : 251 रुपये

जनवरी (द्वितीय), 2013 (वीर नि. संवत्-2539) सह-सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा** वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

भारिल्ल बन्धुओं की जन्मस्थली बरौदास्वामी में -

अहिंसा शोध संस्थान का शिलान्यास सानन्द संपन्न

बरौदास्वामी-ललितपुर (उ.प्र.) : यहाँ श्री कुन्दकुन्द कहान शासन प्रभावना ट्रस्ट इन्दौर द्वारा डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल एवं पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल की जन्मस्थली बरौदास्वामी-ललितपुर (उ.प्र.) में बनाये जाने वाले एक भव्य अहिंसा शोध संस्थान का शिलान्यास माननीय प्रदीपजी जैन 'आदित्य' (ग्रामीण विकास राज्यमंत्री भारत सरकार) द्वारा किया गया।

शिलान्यास के पूर्व शोध संस्थान के सम्बन्ध में बोलते हुए प्रदीप जैन 'आदित्य' ने कहा कि मेरी राय में इस शोध संस्थान का नाम **डॉ. हुकमचंद भारिल्ल अहिंसा शोध संस्थान** रखा जाना चाहिये। उन्होंने जनता से अपील करते हुए उनकी राय जानने की कोशिश की। सभी उपस्थित सहस्राधिक जनता ने तालियों की गड़गड़ाहट के बीच हाथ उठाकर सच्चे दिल से उनकी बात का समर्थन किया। इसप्रकार इस शोध संस्थान का नाम **डॉ. हुकमचंद भारिल्ल शोध संस्थान** हो गया।

केन्द्रीय मंत्री प्रदीप जैन भाषण दे रहे हैं, भारिल्ल बंधु आदि विशिष्ट अतिथि बैठे सुन रहे हैं।

शिलान्यास सभा की अध्यक्षता अध्यात्मरत्नाकर पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल ने की।

इस अवसर पर आस-पास के गांव के लगभग 1000-1200 ग्रामीणों के साथ-साथ इन्दौर, ललितपुर, टीकमगढ, चन्देरी, सागर एवं आसपास के क्षेत्रों के लगभग 400 जैन भाई-बहिन पधारे। इसप्रकार कार्यक्रम में लगभग 1500-1600 लोग उपस्थित थे।

शिलान्यास सभा के पूर्व डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल का 'अहिंसा' विषय पर मार्मिक व्याख्यान हुआ। श्रीमती सुधा चौधरी ने इसी विषय पर अपने विचार व्यक्त किये। इन सबके पूर्व मन्दिर में लघु शान्तिविधान का आयोजन किया गया।

सभा का संचालन श्री मुकेशजी जैन इन्दौर ने किया। साथ ही उन्होंने अहिंसा शोध संस्थान की रूपरेखा समाज के सामने प्रस्तुत की।

ग्रामीण विकास राज्य मंत्री भारत सरकार श्री प्रदीप जैन शिलान्यास कर रहे हैं, साथ में ऊपर हैं डॉ. भारिल्ल

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

27 जन. से 1 फर.	चन्देरी	पंचकल्याणक
2 से 5 फरवरी	मंगलायतन	वार्षिकोत्सव
14 से 17 फरवरी	बजरंग नगर एवं ढाईद्वीप, इन्दौर	सिद्धचक्र विधान एवं पंचकल्याणक घोषणा
22 से 24 फरवरी	जयपुर	वार्षिकोत्सव
22 से 25 मार्च	अलवर	विधान
26 व 27 मार्च	कोटा(मुमुक्षु आश्रम)	अष्टाह्निका

सम्पादकीय - 92

पंचास्तिकाय : अनुशीलन

– पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

गाथा – १६३

प्रस्तुत गाथा १६३ में कहा है कि ''सभी संसारी जीव मोक्षमार्ग के योग्य नहीं होते।''

मूल गाथा इसप्रकार है –

जेण विजाणदि सव्वं पेच्छदि सो तेण सोक्खमणुहवदि।
इदि तं जाणदि भविओ अभवियसत्तो ण सद्दहदि।।१६३।।

(हरिगीत)

जाने-देखे सर्व जिससे, हो सुखानुभव उसी से।
यह जानता है भव्य ही, श्रद्धा करे न अभव्य जिय।।१६३।।

आचार्य श्री कुन्दकुन्द देव मूल गाथा में कहते हैं कि जिससे आत्मा मुक्त होने पर सबको जानता है और देखता है। उससे वह निराकुल सुख का अनुभव करता है – ऐसा भव्य जीव जानते हैं। अभव्य जीव ऐसे निराकुल सुख तथा मोक्ष की श्रद्धा नहीं करता।

आचार्य अमृतचन्द टीका में कहते हैं कि वास्तव में सुख का कारण स्वभाव की प्रतिकूलता-विपरीतता का अभाव है। आत्मा का स्वभाव दृशि-ज्ञप्ति अर्थात् दर्शन-ज्ञान है। मोक्ष में आत्मा सर्वज्ञ है; अतः वहाँ स्वभाव की प्रतिकूलता का अभाव है। मोक्ष में निराकुल सुख की अचलित अनुभूति होती है।

इसप्रकार भव्य जीव ही उस अनन्त सुख को जानते हैं। उपादेय रूप से श्रद्धते हैं, इसलिए वे भव्य जीव ही मोक्षमार्ग के योग्य हैं। अभव्य जीव इस प्रकार की श्रद्धा नहीं करते, इसलिए वे मोक्षमार्ग के योग्य नहीं हैं।

इससे ऐसा कहा है कि कुछ ही संसारी मोक्षमार्गी हैं, सब नहीं।

इसी भाव को कवि हीरानन्दजी ने काव्य में लिखा है; जो इसप्रकार है –

(दोहा)

देखै जानै जिसहिकरि, तिस ही करि सुख होइ।
भव्य मांहि, यहु आचरन, नहिं अभव्य महिं सोइ।।२२२।।

(सवैया इकतीसा)

याही आत्मा के विषै दृग-ज्ञान-सुभाव तामै,
विषय-अभिलाष ताका पडिकूल है।
मोख माहिं जीव तातैं देखै जानै है सदीव,
तामैं विषै का अभाव सोई हेतु मूल है।।
ताही है अनाकुलता लच्छण सुभाव सुख,
ताकी अनुभूति मोख मन्दिर मैं फूल है।
ऐसी अनुभूति भव्य माहिं अनुभूति होइ,
सदा ही अभव्य माहिं सुद्धभाव भूल है।।२२३।।

(दोहा)

मोख जाइवे जोग है, भव्य जीव निरधार।
नहिं अभव्य सिव मग लहै, जतन करौ अनिवार।।२२४।।

कवि हीरानन्दजी ने जो काव्य में कहा उसका सार यह है कि ''जिस वस्तु स्वरूप की समझ, स्व-पर भेदविज्ञान और वस्तु स्वातंत्र्य के सिद्धान्त के समझने से जीव ज्ञाता-दृष्टा हो जाता है, उन्हीं सिद्धान्तों की समझ से वह सुखी होता है। ऐसा स्वरूप सन्मुखता का आचरण भव्यों को ही होता है, अभव्यों को नहीं।

जीव मोक्ष में सदैव ज्ञाता-दृष्टा ही रहता है। वहाँ विषयाभिलाषा नहीं है। अनाकुल सुख प्रगट हो जाता है। ऐसी अनुभूति के पात्र भव्य जीव ही हैं।''

गुरुदेव श्री कानजीस्वामी अपने व्याख्यान में इस गाथा के भाव को इसप्रकार कहते हैं कि आत्मा अपने स्वभाव की श्रद्धा-ज्ञान-एकाग्रता रूप मोक्षमार्ग से परमानन्द दशा प्राप्त करता है। भगवान को पूर्णज्ञान और आनन्ददशा प्रगट हो गई है, इसकारण भगवान को पूर्ण सुख का अनुभव है। ऐसे अतीन्द्रिय सुख की श्रद्धा भव्य जीवों को ही होती है, अभव्य को नहीं।

अहो ! अनाकुल स्वभाव की रमणता से मुक्ति और परमानन्द दशा प्रगट होती है। ऐसे स्वभाव को ही धर्मीजीव उपादेय मानते हैं, परन्तु अपने-अपने गुणस्थान अनुसार वे सुख का अनुभव करते हैं। 'आत्मा के स्वभाव में ही सुख है' – ऐसी श्रद्धा तो सब ज्ञानियों के समान ही है; परन्तु सुख का अनुभव तो गुणस्थान के अनुसार बढ़ता जाता है।

आत्मा का ज्ञान-दर्शन स्वभाव जब अपने विपरीत पुरुषार्थ के कारण ढँक जाता है, तब आवरण कर्म को निमित्त कहा जाता है। कर्म का आवरण तो संयोग है, उसके कारण कोई सुख-दुःख नहीं होता। उल्टे पुरुषार्थ से जो कर्म बंधते हैं, सीधे पुरुषार्थ से उनका नाश हो जाता है। अपने ज्ञान-दर्शन-स्वभाव की पहचान करके उसमें एकाग्र होने पर जब वह आवरण नष्ट हो जाता है तथा केवल दर्शन-केवलज्ञान प्रगट हो जाता है। तब जो आत्मिक शांतरस उत्पन्न होता है, वह सच्चा सुख मात्र मोक्ष में है अन्यत्र नहीं।

गाथा – १६४

अब प्रस्तुत गाथा में कहते हैं कि दर्शन-ज्ञान-चारित्र का कंथचित् हेतुपना क्या है? और जीव स्वभाव में नियत चारित्र का साक्षात् हेतुपना बताया गया है। मूल गाथा इसप्रकार है –

दंसणणाणचरित्ताणि मोक्खमग्गो त्ति सेविदव्वाणि।
साधूहि इदं भणिदं तेहिं दु बंधो व मोक्खो वा।।१६४।।

(हरिगीत)

दृग-ज्ञान अर चारित्र मुक्तिपन्थ मुनिजन ने कहे।
पर ये ही तीनों बंध एवं मुक्ति के भी हेतु हैं।।१६४।।

आचार्य श्री कुन्दकुन्द देव मूल गाथा में कहते हैं कि दर्शन-ज्ञान-चारित्र मोक्षमार्ग हैं। इसलिए वे सेवन योग्य हैं। परन्तु उनसे बंध भी होता है और मोक्ष भी होता है।

आचार्य अमृतचन्द्र देव टीका में कहते हैं कि दर्शन ज्ञान चारित्र कथंचित् मोक्ष हेतु एवं कथंचित् बंध हेतु भी हैं। यह दर्शन-ज्ञान-चारित्र यदि अल्प भी परसमय प्रवृत्ति के साथ हों तो उष्णघृत की भाँति कथंचित् विरुद्ध कार्य के कारण अर्थात् बंधरूप कार्य के कारणपने की व्याप्ति के कारण बंध का हेतु भी है।

जब वे दर्शन-ज्ञान-चारित्र समस्त पर समय प्रवृत्ति से निवृत्त रूप स्व-समय की प्रवृत्ति के साथ संयुक्त होते हैं तब विरुद्ध कार्य का कारण निवृत्त हो गया होने से साक्षात् मोक्ष कारण ही है इसलिए 'स्वसमय प्रवृत्ति' नाम के चारित्र में साक्षात् मोक्षमार्गपना घटित होता है।

इसी भाव को कवि हीरानन्दजी काव्य में कहते हैं, जो इसप्रकार हैं-

(दोहा)

दरसन ज्ञान चरित्र ए, मारग सिव के सेय।
साधूजन यों कहत हैं, बंध-मोख विधि एय।।२२६।।

(सवैया इकतीसा)

एई दृग-ग्यान चारु चारित त्रिकार जानि,
पर कै मिलाप सेती बंधन प्रगट है।
अपने सुभाव जब होहिं तीनौं एक रूप,
स्व समै कहावै तब मोखरूप वट है।।
जैसैं अग्नि संजोग घीव दाहक स्वरूप होइ,
अग्नि संजोग मिटै सेती सीतता सु घट है।
तैसैं स्व चरित्री जीव आपतैं पवित्री होइ,
सुद्ध मोख मारग मैं सबही सुलट है।।२२७।।

(दोहा)

मोख पंथ के पथिक कौं, सिव पदार्थ पाथेय।
दरसन ग्यान चरित्र पद, और सकल पद हेय।।२२८।।

कवि हीरानन्दजी के काव्य का सार यह है कि सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र मोक्ष के मार्ग हैं। ये सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र जब तीनों एकरूप होते हैं तो स्व-समय कहलाते हैं और मोक्ष के कारण बनते हैं। जैसे - अग्नि के संयोग से घी दाहक स्वरूप हो जाता है तथा अग्नि का संयोग मिटते ही शीतल हो जाता है, उसीप्रकार स्वरूप में लीन होने से जीव पवित्र होता हुआ शुद्ध मोक्षमार्ग को प्राप्त करता है।

इसप्रकार मोक्षमार्ग के पथिक को दर्शन ज्ञान-चारित्र-पाथेय हैं, शेष सब हेय हैं।

गुरुदेव श्री कानजीस्वामी अपने व्याख्यान में कहते हैं कि सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप रत्नत्रय मोक्ष का मार्ग है। चिदानन्द भगवान आत्मा की प्रतीति ज्ञान एवं रमणता मोक्ष का कारण होने से धर्मी जीवों को सेवन करने योग्य है। तथा जब तक रत्नत्रय की पूर्णता नहीं होती, तबतक राग से बन्धन भी होता है, इस कारण रत्नत्रय को कथंचित् बंध का कारण भी कहा है; परन्तु वस्तुतः तो बात यह है कि रत्नत्रय के साथ सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की श्रद्धा वगैरह में जो राग है, वही बंध का कारण है, रत्नत्रय बंध का कारण नहीं है। ज्ञान तो आत्मा का स्वभाव मोक्ष का ही कारण है। ज्ञानी के रत्नत्रय के साथ पाँच व्रतादि के जो शुभभाव होते हैं, वे शुभभाव बंध के कारण हैं। ज्ञायक स्वभाव की प्रतीति रूप निश्चय सम्यक्दर्शन तो निर्विकल्प है, वह बंध का कारण नहीं है।

देव-शास्त्र-गुरु की व्यवहार श्रद्धा, नवतत्त्व में क्षयोपशमभाव तथा पंच महाव्रत की वृत्ति शुभराग है। ऐसे व्यवहार श्रद्धा ज्ञान चारित्र सहित साधकदशा की यह बात है। ज्ञानी को जो निश्चय रत्नत्रय है, वह तो मोक्ष का ही कारण है, उसके साथ जो पर की ओर का श्रद्धा-ज्ञान-चारित्र है, वह राग है, बंध का कारण है। उसे व्यवहार से मोक्ष का कारण भी कहते हैं। इसीलिए यहाँ ऐसा कहा है कि रत्नत्रय कथंचित् बंध का कारण है और कथंचित् मोक्ष कारण है।

इसप्रकार गुरुदेव श्री ने रत्नत्रय को बंध व मोक्ष के कारणपने का स्पष्टीकरण किया।

गाथा - १६५

अब प्रस्तुत १६५वीं गाथा में सूक्ष्म पर समय के स्वरूप का कथन किया जा रहा है।

मूल गाथा इसप्रकार है -

अण्णाणादो णाणी जदि मण्णदि सुद्धसंपओगादो।
हवदि त्ति दुक्खमोक्खं परसमयरदो हवदि जीवो।।१६५।।

(हरिगीत)

शुभभक्ति से दुःखमुक्त हो जाने यदि अज्ञान से।
उस ज्ञानी को भी परसमय ही कहा है जिनदेव ने।।१६५।।

आचार्य श्री कुन्दकुन्द देव मूल गाथा में कहते हैं कि ''सुद्ध संप्रयोग से अर्थात् शुभ भक्तिभाव से दुःख से मुक्ति होती है'' - कोई यदि अज्ञान से ऐसा माने अर्थात् शुभभाव की ओर झुके तो वह ज्ञानी भी पर समयरत है - ऐसा माना जाता है।

तात्पर्य यह है कि यदि कोई ज्ञानी अज्ञान के कारण ऐसा माने कि - 'अरहंतादि के प्रति भक्ति-अनुराग वाली मन्द शुद्धि से भी क्रमशः मोक्ष होता है' तो वह भी सूक्ष्म पर समय रत है। यहाँ अज्ञान के कारण का अर्थ 'मिथ्यात्व के वश नहीं, बल्कि रागांश के कारण' है।

आचार्य अमृतचन्द्र टीका में स्पष्टीकरण करते हुए कहते हैं कि सिद्धि के साधनभूत अर्हदादि के प्रति भक्तिभाव से अनुरंजित अर्थात्

सराग चित्तवृत्ति ही शुद्ध संप्रयोग का अर्थ है। अब अज्ञानलव के आवेश से अर्थात् अल्प अज्ञानवश उत्साह में आकर यदि ज्ञानवान भी ऐसा माने कि शुद्ध संप्रयोग से मोक्ष होता है - ऐसे अभिप्राय द्वारा खेद-खिन्न होता हुआ उस शुद्धसंयोग में अर्थात् शुभभाव में प्रवृत्ति करे तो तबतक वह भी रागलव अर्थात् किंचित् राग के सद्भाव के कारण जब वह भी परसमयरत कहलाता है, तो जो निरंकुश रागरूप क्लेश से कलंकित हैं, ऐसी अनरंगवृत्ति वाले क्या पर समयरत नहीं कहलायेंगे? अवश्य कहलायेंगे ही।

इस गाथा पर विशेष टिप्पणी करते हुए आचार्य श्री जयसेन ने कहा है कि - कोई पुरुष निर्विकार शुद्धात्म भावना स्वरूप परमोपेक्षा संयम में स्थित रहना चाहता है, परन्तु उसमें स्थित रहने में अशक्त वर्तता हुआ काम-क्रोधादि अशुभ परिणामों के वंचनार्थ अथवा संसार स्थिति के छेदनार्थ जब पंच परमेष्ठी के प्रति गुणस्तवन आदि भक्ति करता है, तब वह सूक्ष्म परसमय रूप से परिणत वर्तता हुआ सराग सम्यग्दृष्टि है।

यदि वह पुरुष शुद्धात्म भावना में समर्थ होने पर भी उसे शुद्धात्म भावना को छोड़कर 'शुभोपयोग से ही मोक्ष होता है' - ऐसा एकांत माने तो वह स्थूल परसमय रूप परिणाम द्वारा अज्ञानी-मिथ्यादृष्टि होता है।

कवि हीरानन्दजी इसी भाव को काव्य में कहते हैं -

(दोहा)

ग्यानी जब अज्ञान तैं माने करम विमोख।
सुद्ध प्रयोग परम्परा पर समयाश्रित धोख।।२२९।।

(सवैया इकतीसा)

आपतैं विमुख होई ग्यानी जीव जाही समै,
ताहि समै एक अवलम्ब चाहे है।
जातैं विषै उपजनि औ क्रोधादि बढ़नि,
दौनों का विनास होइ कर्म पुंज दाहै है।।
जिन आदि पंच गुरु उर मैं विचार करै,
तिनही की भगति मैं प्रीति निरवाहै है।
सुद्ध संप्रयोगधारी सूच्छिम परसमै तैं,
परम्परा जीव सुद्ध मोख अवगाहै है।।२३१।।

(दोहा)

ग्यानी सुद्ध-सुभाव-युत, परसमयाश्रित सोइ।
सूच्छिम-राग प्रभावतैं तद्भव मुकत न होइ।।२३२।।

(सोरठा)

मुगति विरोधक राग, सवै विभावके जनक हैं।
तातैं पहिलहिं त्याग, राग-विरोध-विमोह मल।।

गुरुदेव श्री कानजीस्वामी अपने व्याख्यान[४] में कहते हैं कि आत्मा का राग भले भगवान की भक्ति का ही क्यों न हो, वह बन्ध का ही कारण है। भले! शास्त्र पढ़ने का हो तो भी यदि सूक्ष्म राग को भी मोक्ष का कारण माने तो वह मिथ्यादृष्टि है। आत्मा का तो ज्ञान स्वभाव है, उसमें एकाग्रता छोड़कर राग में लीन होना तथा राग को मोक्ष का कारण माने तो वह जीव मिथ्यादृष्टि हो जाता है। अरहंत भक्ति का शुभराग भी मोक्ष का कारण नहीं है। जिस भाव से तीर्थंकर नाम कर्म बंधे, वह भाव भी राग है। वह भी आदरणीय नहीं है।

अपने ज्ञान-दर्शन स्वभाव में परिणमन करने से जो सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र हुआ, वह ही मोक्ष का कारण है। इसके सिवाय देव-गुरु-शास्त्र की ओर का भक्तिभाव बंध का कारण है। मोक्ष की प्राप्ति का शुद्ध उपादान तो आत्मा का चैतन्य स्वभाव है तथा अरहंत देव वगैरह तो मोक्ष के निमित्त हैं। उस निमित्त की ओर के झुकाव वाला जो रागभाव है, वह ज्ञानस्वभाव नहीं है। वह बंध का कारण रूप शुभभाव है।

इसप्रकार सूक्ष्म पर समय का स्वरूप कहा। ●

साप्ताहिक गोष्ठी सम्पन्न

जयपुर (राज.) : श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय द्वारा होने वाली साप्ताहिक रविवारीय गोष्ठियों की शृंखला में दिनांक 6 जनवरी को **'क्रमबद्धपर्याय : एक अनुशीलन'** विषय पर एक गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता टोडरमल महाविद्यालय के उपप्राचार्य पण्डित शांतिकुमारजी पाटील जयपुर ने की।

श्रेष्ठ वक्ता के रूप में उपाध्याय वर्ग में हिमांशु जैन (वरिष्ठ उपाध्याय) एवं शास्त्री वर्ग में जिनेश सेठ मुम्बई (शास्त्री प्रथम वर्ष) रहे।

गोष्ठी का संचालन गोम्मटेश चौगुले एवं अनिल जैन भिण्ड ने किया। आभार प्रदर्शन पण्डित सोनूजी शास्त्री ने किया।

अपूर्व अवसर

गुरुदेवश्री की आत्मसाधना भूमि सोनगढ में गत तीन वर्षों से श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई द्वारा सफलतापूर्वक संचालित श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन विद्यार्थीगृह में इस वर्ष कक्षा 6, 7 एवं 8 में अंग्रेजी तथा गुजराती दोनों माध्यम में प्रवेश दिया जा रहा है।

यहाँ छात्रों के आवास, भोजन, चिकित्सा एवं लौकिक शिक्षण की सम्पूर्ण व्यवस्था नि:शुल्क है। प्रवेश के इच्छुक छात्र आवेदन पत्र मंगाकर 20 मार्च 2013 तक भरकर अवश्य भेज देवें। ध्यान रहे पूर्व कक्षा में 60 प्रतिशत से कम अंक प्राप्त छात्र का आवेदन पत्र स्वीकार नहीं किया जायेगा।

प्रवेश योग्य छात्रों को दिनांक 16 अप्रैल से 20 अप्रैल तक पांच दिवसीय प्रवेश पात्रता शिविर में बुलाया जायेगा, जिसमें छात्र को शिविर की प्रत्येक गतिविधि में उपस्थित रहना आवश्यक है। आवेदन पत्र वेबसाईट **www.vitragvani.com** पर भी उपलब्ध हैं।

संपर्क सूत्र - कामना जैन (प्राचार्य), श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन विद्यार्थी गृह, राजकोट-भावनगर हाइवे रोड, सोनगढ, जिला-भावनगर 364250 (गुज.) फोन नं. (02846) 244510, 09624807462

(पृष्ठ 7 का शेष ...)

वस्तुस्वरूप का निर्णय करके बाद में जब स्वद्रव्य में परिणाम को एकाग्र करे, तभी स्वानुभव होता है। इस स्वानुभव के काल में नय-प्रमाणादि के विचार नहीं रहते। नय-प्रमाणादि के विचार तो परोक्षज्ञान हैं और स्वानुभव तो कथंचित् प्रत्यक्ष है।

पहले आगम-अनुमान आदि परोक्षज्ञान से जिस स्वरूप को जाना एवं विचार में लिया, उसमें परिणाम एकाग्र होने पर स्वानुभव प्रत्यक्ष होता है।

इस स्वानुभव में पहले से अन्य कोई स्वरूप जानने में आया - ऐसा नहीं है; अत: ज्ञान के स्वानुभव में जानपने की अपेक्षा से विशेषता नहीं है, परन्तु परिणाम की मग्नता है -यही विशेषता है।[1]

जिसने पहले एक बार अनुभव के द्वारा स्वरूप को जान लिया हो, इसकी धारणा टिकायी हो; वह फिर से इसका स्मरण करे - **'पहले आत्मा का अनुभव हुआ, तब ऐसा आनन्द था, ऐसी शान्ति थी, ऐसा ज्ञान था, ऐसा वैराग्यभाव था, ऐसी एकाग्रता थी, ऐसा उद्यम था - ऐसे इसके स्मरण के द्वारा चित्त को एकाग्र करके धर्मी जीव फिर से उसमें अपने परिणाम को लगाते हैं।**[2]

मति-श्रुतज्ञान ने आत्मा का जो स्वरूप जाना, उसमें ही वह मग्न होता है; इसमें जानपने की अपेक्षा से फर्क नहीं है, परन्तु परिणाम की मग्नता की अपेक्षा से फर्क है।

मति-श्रुतज्ञान का उपयोग अन्तर्मुख होकर जब स्वानुभव करता है; तब उस निर्विकल्पदशा में कोई अपूर्व आनन्द का अनुभव होता है। जानपने की अपेक्षा भले ही वहाँ विशेषता न हो, किन्तु आनन्द के अनुभव आदि की अपेक्षा से उसमें जो विशेषता है, वह अब प्रश्न-उत्तर के द्वारा दर्शाते हैं।[3]''

उक्त सम्पूर्ण मंथन पर विचार करने पर जो वस्तुस्वरूप स्पष्टरूप से उभरकर सामने आता है; उसे हम सरल-सुबोध भाषा में इसप्रकार स्पष्ट कर सकते हैं।

पण्डित श्री टोडरमलजी ने जिस पत्र के उत्तर में यह रहस्यपूर्णचिट्ठी लिखी थी; यद्यपि वह पत्र उपलब्ध नहीं है; तथापि पण्डितजी के इस वाक्य से कि - **तुमने लिखा कि निश्चयसम्यक्त्व प्रत्यक्ष है और व्यवहारसम्यक्त्व परोक्ष है -** यह स्पष्ट ही है कि उन्होंने सम्यग्दर्शन में प्रत्यक्ष और परोक्ष भेद किये थे।

इसलिए उनको अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में लिखा गया कि प्रत्यक्ष और परोक्ष तो प्रमाण के भेद हैं, सम्यग्दर्शन के नहीं।

सम्यग्ज्ञान को प्रमाण कहते हैं।[4] प्रमाण सम्यग्ज्ञानरूप होने से ज्ञान गुण की पर्याय है और सम्यग्दर्शन श्रद्धा गुण की पर्याय है।

सामान्यत: ज्ञान पाँच प्रकार का होता है - मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मन:पर्ययज्ञान और केवलज्ञान। उक्त पाँच ज्ञानों में आरंभ के मतिज्ञान और श्रुतज्ञान - ये दो ज्ञान परोक्षप्रमाण हैं और अन्त के तीन अवधिज्ञान, मन:पर्ययज्ञान और केवलज्ञान प्रत्यक्षप्रमाण हैं।

अवधिज्ञान और मन:पर्ययज्ञान क्षयोपशमज्ञानरूप होने से एकदेश प्रत्यक्ष और केवलज्ञान क्षायिकज्ञानरूप होने से सकल प्रत्यक्ष है।

सीधे आत्मा से उत्पन्न होनेवाले अत्यन्त स्पष्ट ज्ञान को प्रत्यक्ष प्रमाण और मुख्यरूप से इन्द्रियाँ और मन हैं निमित्त जिसमें, ऐसे पराधीन और अस्पष्ट ज्ञान को परोक्ष प्रमाण कहते हैं।

परीक्षामुख सूत्र में विशद (निर्मल) ज्ञान को प्रत्यक्ष और अविशद (अनिर्मल) ज्ञान को परोक्ष कहा गया है।[1]

प्रत्यक्ष ज्ञान के परमार्थ (निश्चय) प्रत्यक्ष और व्यवहार प्रत्यक्ष - इसप्रकार के भेद भी किये जाते हैं।

अक्षं अक्षं प्रति यत् वर्तते तत्प्रत्यक्षम्। जो अक्ष से उत्पन्न हो, उसे प्रत्यक्ष कहते हैं। अक्ष शब्द का अर्थ आत्मा भी होता है और इन्द्रियाँ भी होता है। अत: जब हम अक्ष का अर्थ आत्मा करते हैं तो उसका भाव होता है कि जो सीधा आत्मा से उत्पन्न हो, वह प्रत्यक्ष है; पर जब अक्ष का अर्थ इन्द्रियाँ करें तो उसका अर्थ होगा कि जो ज्ञान इन्द्रियों के सहयोग से उत्पन्न हो, वह प्रत्यक्ष है।

इसप्रकार यह सुनिश्चित है कि सीधे आत्मा से उत्पन्न होनेवाले सम्यग्ज्ञान को पारमार्थिक (निश्चय) प्रत्यक्ष कहते हैं और इन्द्रियों के निमित्तपूर्वक होनेवाले सामान्यज्ञान को, इन्द्रियज्ञान को सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष कहते हैं।

१. परीक्षामुख, अध्याय २, सूत्र ३ एवं अध्याय ३, सूत्र १

आध्यात्मिक शिक्षण शिविर संपन्न

करेली (म.प्र.) : यहाँ अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन करेली के तत्त्वावधान में दिनांक 23 से 30 दिसम्बर 2012 तक आठ दिवसीय आध्यात्मिक शिक्षण शिविर का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर डॉ. मनीषजी शास्त्री खतौली, पण्डित सुदीपजी शास्त्री जबलपुर, पण्डित सुमितजी शास्त्री छिन्दवाड़ा एवं मंगलार्थी पीयूषजी झांसी द्वारा कक्षाओं का लाभ प्राप्त हुआ।

शिविर के मंगल आमंत्रणकर्ता श्री ज्ञानचंद अशोक कुमार बड़कुल परिवार तथा ध्वजारोहणकर्ता स्वस्तिक स्टोर्स परिवार थे।

इस शिविर में जिनधर्म के शंखनाद रूप प्रभात-फेरी, जिनेन्द्र-पूजन, गुरुदेवश्री का सी.डी. प्रवचन, विभिन्न कक्षायें, जिनेन्द्र भक्ति, सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि का आयोजन किया गया। इस अवसर पर समयसार के निर्जरा अधिकार, क्रिया-परिणाम-अभिप्राय तथा तत्त्वार्थसूत्र के प्रथम अध्याय पर डॉ. मनीषजी शास्त्री खतौली द्वारा प्रौढ कक्षा, पण्डित सुदीपजी, सुमितजी व पीयूषजी द्वारा किशोर वर्ग, बाल वर्ग प्रथम एवं बाल वर्ग द्वितीय की कक्षायें आयोजित की गई।

सभी विषयों की परीक्षा ली गई, जिसमें समस्त शिविरार्थियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया।

१. अध्यात्म संदेश, पृष्ठ ८६ २. वही, पृष्ठ ८७ ३. वही, पृष्ठ ८७
४. सम्यग्ज्ञानं प्रमाणम् : न्यायदीपिका, प्रथम प्रकाश, पृष्ठ ९

रहस्य : रहस्यपूर्ण चिट्ठी का

109 पाँचवां प्रवचन

-डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे...)

अवधि-मन:पर्यय व केवलज्ञान को प्रत्यक्ष कहा है; परन्तु इनमें से केवलज्ञान तो साधक के है नहीं; मन:पर्ययज्ञान किसी मुनि के ही होता है; परन्तु मन:पर्यय या अवधिज्ञान स्वानुभव के समय उपयोगरूप नहीं होता। **स्वानुभव तो मति-श्रुतज्ञान के द्वारा ही होता है। पहले ज्ञानस्वभाव के अवलम्बन से यथार्थ निर्णय करके, बाद में मति-श्रुत के उपयोग को बाह्य से समेटकर आत्मसन्मुख एकाग्र करने से विज्ञानघन आत्मा आनन्द सहित अनुभव में आता है। यही सम्यग्दर्शन एवं सम्यग्ज्ञान है।**[१]

इस स्वानुभव में जो आनन्द के स्वाद का वेदन है, उसे तो अपने उपयोग से आत्मा सीधा ही अनुभवता है; उस स्वाद का वेदन आगम या अनुमान आदि परोक्षज्ञान के द्वारा नहीं करता; परन्तु अपने ही स्वानुभव प्रत्यक्षज्ञान के द्वारा उसका वेदन करता है, आत्मा स्वयं अपने में उपयोग को एकाग्र करके सीधा ही इस अनुभव के रस को आस्वादता है; अतएव वह अतीन्द्रिय है। यह अनुभव इन्द्रियों से या विकल्पों से पार है।

अनुभव से बाहर आने के बाद जो विकल्प उठें, वे विकल्प भी ज्ञान से भिन्नरूप ही रहते हैं, अनुभवी धर्मात्मा को ज्ञान की व विकल्प की एकता कभी नहीं होती, उसे सम्यग्दर्शन व सम्यग्ज्ञान अविच्छन्नरूप से वर्तते हैं। सम्यक्त्व की व स्वानुभव की दशा ही कोई अलौकिक है।

इसतरह निश्चय व्यवहार सम्यक्त्व का स्वरूप, निर्विकल्प अनुभव न हो तब भी सम्यग्दृष्टि को सम्यग्दर्शन की विद्यमानता तथा स्वानुभूति के काल में मति-श्रुतज्ञान का अतीन्द्रियपना किसप्रकार है और ऐसा निर्विकल्प स्वानुभव कैसे उद्यम से होता है - ये सब बात बहुत अच्छे ढंग से समझायी है।[२]''

रहस्यपूर्णचिट्ठी के उक्त कथन का भाव स्वामीजी के प्रतिपादन में बहुत कुछ स्पष्ट हो गया है। पण्डितजी का स्पष्ट मत यह है कि जिसे हम अनुभव या अनुभूति कह रहे हैं; वह एक प्रकार से ध्यान ही है; क्योंकि उसमें एकाग्रचिन्तानिरोधरूप ध्यान का लक्षण भी घटित होता है।

अपनी बात के समर्थन में वे नाटक समयसार का कवित्त भी प्रस्तुत करते हैं और कहते हैं कि उक्त अनुभव को विभिन्न अपेक्षाओं से अतीन्द्रिय के साथ-साथ मनजनित भी कहा जा सकता है, कहा जाता है।

उक्त कथनों में विरोध नहीं, विवक्षा भेद है।

इसीप्रकार वे मुल्तानवाले साधर्मी भाइयों के इस तर्क को भी नकार देते हैं कि चूँकि आत्मा अतीन्द्रिय है; अत: वह अतीन्द्रियज्ञान द्वारा ही ग्रहण किया जाना संभव है।

१. अध्यात्मसंदेश, पृष्ठ ६८ २. वही, पृष्ठ ६९-७०

पण्डितजी कहते हैं कि हमें यह नहीं भूल जाना चाहिए कि मति-श्रुतज्ञान के विषय छहों द्रव्य और उनकी असर्वपर्यायें हैं।[१] इसलिए **भगवान आत्मा मति-श्रुतज्ञान से जाना जा सकता है। यदि ऐसा नहीं मानेंगे तो फिर केवलज्ञान होने के पहले आत्मा का जानना संभव नहीं होगा और आत्मा को जाने बिना, उसमें अपनापन स्थापित किये बिना, उसका ध्यान किये बिना केवलज्ञान का होना संभव नहीं है।**

इसप्रकार मुक्ति का मार्ग ही पूर्णत: अवरुद्ध हो जायेगा। ●

छठवां प्रवचन

संतप्त मानस शांत हों, जिनके गुणों के गान में।
वे वर्द्धमान महान जिन, विचरें हमारे ध्यान में।।

रहस्यपूर्णचिट्ठी पर चर्चा चल रही है। विगत प्रवचनों में सविकल्प से निर्विकल्प होने की प्रक्रिया पर मंथन होने के बाद अब प्रत्यक्ष-परोक्ष संबंधी प्रश्नों पर विचार करते हैं।

उक्त संदर्भ में रहस्यपूर्णचिट्ठी में जो समाधान प्रस्तुत किया गया है, वह इसप्रकार है -

''तथा तुमने प्रत्यक्ष-परोक्ष का प्रश्न लिखा सो भाईजी, प्रत्यक्ष-परोक्ष तो सम्यक्त्व के भेद हैं नहीं। चौथे गुणस्थान में सिद्धसमान क्षायिकसम्यक्त्व हो जाता है; इसलिए सम्यक्त्व तो केवल यथार्थ श्रद्धानरूप ही है। वह (जीव) शुभाशुभ कार्य करता भी रहता है। इसलिए तुमने जो लिखा था कि - *निश्चयसम्यक्त्व प्रत्यक्ष है और व्यवहारसम्यक्त्व परोक्ष है* - सो ऐसा नहीं है।

सम्यक्त्व के तो तीन भेद हैं - वहाँ उपशमसम्यक्त्व और क्षायिक- सम्यक्त्व तो निर्मल हैं; क्योंकि वे मिथ्यात्व के उदय से रहित हैं और क्षयोपशमसम्यक्त्व समल है; क्योंकि सम्यक्त्वमोहनीय के उदय से सहित है।

परन्तु इस सम्यक्त्व में प्रत्यक्ष-परोक्ष के कोई भेद तो नहीं हैं।

क्षायिकसम्यक्त्वी के शुभाशुभरूप प्रवर्तते हुए व स्वानुभवरूप प्रवर्त्तते हुए सम्यक्त्वगुण तो समान ही है; इसलिए सम्यक्त्व के तो प्रत्यक्ष-परोक्ष भेद नहीं मानना।

तथा प्रमाण के प्रत्यक्ष-परोक्ष भेद हैं, सो प्रमाण सम्यग्ज्ञान है; इसलिए मतिज्ञान-श्रुतज्ञान तो परोक्षप्रमाण हैं, अवधि-मन:पर्यय-केवलज्ञान प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। *'आद्ये परोक्षं, प्रत्यक्षमन्यत्*[१]*'* ऐसा सूत्र का वचन है तथा तर्कशास्त्र में प्रत्यक्ष-परोक्ष का ऐसा लक्षण कहा है - *'स्पष्टप्रतिभासात्मकं प्रत्यक्षमस्पष्टं परोक्षं।'*

जो ज्ञान अपने विषय को निर्मलतारूप स्पष्टतया भलीभाँति जाने सो प्रत्यक्ष और जो स्पष्ट भलीभाँति न जाने सो परोक्ष।

वहाँ मतिज्ञान-श्रुतज्ञान के विषय तो बहुत हैं, परन्तु एक भी ज्ञेय को सम्पूर्ण नहीं जान सकता; इसलिए परोक्ष कहे

१. तत्त्वार्थसूत्र, अध्याय १, सूत्र २६ २. वही, सूत्र ११-१२

और अवधि-मन:पर्ययज्ञान के विषय थोड़े हैं; तथापि अपने विषय को स्पष्ट भलीभाँति जानता है; इसलिए एकदेश प्रत्यक्ष है और केवलज्ञान सर्व ज्ञेय को आप स्पष्ट जानता है; इसलिए सर्वप्रत्यक्ष है।

तथा प्रत्यक्ष के दो भेद हैं - एक परमार्थ प्रत्यक्ष, दूसरा सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष। वहाँ अवधि, मन:पर्यय और केवलज्ञान तो स्पष्ट प्रतिभासरूप हैं ही, इसलिए पारमार्थिक प्रत्यक्ष हैं तथा नेत्रादिक से वर्णादिक को जानते हैं; वहाँ व्यवहार से ऐसा कहते हैं - 'इसने वर्णादिक प्रत्यक्ष जाने', एकदेश निर्मलता भी पाई जाती है, इसलिए इनको सांव्यवहारिक प्रत्यक्ष कहते हैं; परन्तु यदि एक वस्तु में अनेक मिश्र वर्ण हैं, वे नेत्र द्वारा भलीभाँति नहीं ग्रहण किये जाते हैं, इसलिए इसको परमार्थप्रत्यक्ष नहीं कहा जाता है।

तथा परोक्ष प्रमाण के पाँच भेद हैं - स्मृति, प्रत्यभिज्ञान, तर्क, अनुमान और आगम।

वहाँ जो पूर्व काल में जो वस्तु जानी थी; उसे याद करके जानना, उसे स्मृति कहते हैं। दृष्टांत द्वारा वस्तु का निश्चय किया जाये उसे प्रत्यभिज्ञान कहते हैं। हेतु के विचार युक्त जो ज्ञान, उसे तर्क कहते हैं। हेतु से साध्य वस्तु का जो ज्ञान उसे अनुमान कहते हैं। आगम से जो ज्ञान हो, उसे आगम कहते हैं।

ऐसे प्रत्यक्ष-परोक्ष प्रमाण के भेद कहे हैं।

वहाँ इस स्वानुभवदशा में जो आत्मा को जाना जाता है, सो श्रुतज्ञान द्वारा जाना जाता है। श्रुतज्ञान है वह मतिज्ञानपूर्वक ही है, वे मतिज्ञान-श्रुतज्ञान परोक्ष कहे हैं; इसलिए यहाँ आत्मा का जानना प्रत्यक्ष नहीं है। तथा अवधि-मन:पर्यय का विषय रूपी पदार्थ ही है और केवज्ञान छद्मस्थ के हैं नहीं, इसलिए अनुभव में अवधि-मन:पर्यय केवल द्वारा आत्मा का जानना नहीं है। तथा यहाँ आत्मा को स्पष्ट भलीभाँति नहीं जानता है; इसलिए पारमार्थिक प्रत्यक्षपना तो सम्भव नहीं है।

तथा जैसे नेत्रादिक से वर्णादिक जानते हैं, वैसे एकदेश निर्मलता सहित भी आत्मा के असंख्यात प्रदेशादिक नहीं जानते हैं; इसलिए सांव्यवहारिक प्रत्यक्षपना भी सम्भव नहीं है।

यहाँ पर तो आगम-अनुमानादिक परोक्ष ज्ञान से आत्मा का अनुभव होता है। जैनागम में जैसा आत्मा का स्वरूप कहा है, उसे वैसा जानकर उसमें परिणामों को मग्न करता है; इसलिए आगम को परोक्ष प्रमाण कहते हैं।

अथवा ''मैं आत्मा ही हूँ, क्योंकि मुझमें ज्ञान है; जहाँ-जहाँ ज्ञान है, वहाँ-वहाँ आत्मा है - जैसे सिद्धादिक हैं तथा जहाँ आत्मा नहीं है, वहाँ ज्ञान भी नहीं है - जैसे मृतक कलेवरादिक हैं।' इसप्रकार अनुमान द्वारा वस्तु का निश्चय करके उसमें परिणाम मग्न करता है; इसलिए अनुमान परोक्ष प्रमाण कहा जाता है।

अथवा आगम-अनुमानादिक द्वारा जो वस्तु जानने में आयी, उसी को याद रखकर उसमें परिणाम मग्न करता है; इसलिए स्मृति कही जाती है।

इत्यादिक प्रकार से स्वानुभव में परोक्षप्रमाण द्वारा ही आत्मा का जानना होता है। वहाँ पहले जानना होता है, पश्चात् जो स्वरूप जाना उसी में परिणाम मग्न होते हैं, परिणाम मग्न होने पर कुछ विशेष जानपना होता नहीं है।[१]''

उक्त प्रकरण का भाव आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजी स्वामी इसप्रकार स्पष्ट करते हैं -

''सम्यग्दर्शन के प्रत्यक्ष-परोक्ष के बारे में आपने लिखा, परन्तु ऐसा भेद सम्यक्त्व में नहीं है। सम्यक्त्व तो शुद्ध आत्मा की प्रतीतिरूप है, यह प्रतीति सिद्ध भगवान को व तिर्यंच सम्यग्दृष्टि को एक-सी ही है।

जैसी शुद्धात्मा की प्रतीति सिद्ध भगवान के सम्यक्त्व में है, चौथै गुणस्थानवाले सम्यग्दृष्टि को भी वैसी ही शुद्धात्मा की प्रतीति है, उसमें कुछ भी फर्क नहीं। सिद्ध भगवान का सम्यक्त्व प्रत्यक्ष व चौथे गुणस्थानवाले का सम्यक्त्व परोक्ष - ऐसा भेद नहीं है।

अथवा स्वानुभव के समय सम्यक्त्व प्रत्यक्ष और बाहर में शुभाशुभ उपयोग के समय सम्यक्त्व परोक्ष - ऐसा भी नहीं है। चाहे शुभाशुभ में प्रवर्तता हो या स्वानुभव के द्वारा शुद्धोपयोग में प्रवर्त्तता हो, सम्यग्दृष्टि का सम्यक्त्व तो सामान्य वैसा का वैसा ही है अर्थात् **शुभाशुभ के समय सम्यक्त्व में कोई मलिनता आ गई और स्वानुभव के समय सम्यक्त्व में कोई निर्मलता बढ़ गई - ऐसा नहीं है।**[२]

एक बार भी स्वानुभूति के द्वारा जिसने शुद्धात्मा की प्रतीति की, उसको सम्यग्दर्शन हुआ सो हुआ, बाद में जब वह स्वानुभव में हो, तब उसकी प्रतीति का जोर बढ़ जाय और जब बाहर शुभाशुभ में हो, तब उसकी प्रतीति ढीली पड़ जाय - ऐसा नहीं है एवं **निर्विकल्प दशा के समय सम्यक्त्व प्रत्यक्ष व सविकल्प दशा के समय सम्यक्त्व परोक्ष - ऐसा प्रत्यक्ष-परोक्षपना भी सम्यक्त्व में नहीं है अथवा निर्विकल्पदशा के समय निश्चयसम्यक्त्व व सविकल्प दशा के समय अकेला व्यवहार सम्यक्त्व - ऐसा भी नहीं है।**

धर्मी को सविकल्पदशा हो या निर्विकल्प दशा - दोनों समय में शुद्धात्मा की प्रतीतिरूप निश्चयसम्यक्त्व तो सतत् रूप से बना रहता है। यदि निश्चयसम्यक्त्व न हो तो साधकपना ही न रहे, मोक्षमार्ग ही न रहे। हाँ, निश्चयसम्यक्त्व में भले किसी को औपशमिक हो, किसी को क्षायोपशमिक हो और किसी को क्षायिक हो; लेकिन शुद्धात्मा की प्रतीति तो तीनों में एक सी है।[३]

इसप्रकार अनुमान व नय-प्रमाणादिक के विचार तत्त्वनिर्णय के काल में होते हैं; परन्तु **मात्र विचार से ही स्वानुभव नहीं हो जाता।**

(शेष पृष्ठ 5 पर...)

१. रहस्यपूर्णचिट्ठी : मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ ३४४-३४६
२. अध्यात्म संदेश, पृष्ठ ७२-७३ ३. वही, पृष्ठ ७४-७५

17 जनवरी 2013, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-32 / 2012-14

शोक समाचार

1. जयपुर (राज.) निवासी श्रीमती कला सेठी धर्मपत्नी श्री नरेश कुमार सेठी आई.ए.एस. (पूर्व अध्यक्ष-भा.दि.जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी एवं दि.जैन अतिशय क्षेत्र महावीरजी, अध्यक्ष-श्री महावीर दि.जैन शिक्षा परिषद् एवं भ.महावीर स्मारक समिति वैशाली) का दिनांक 21 दिसम्बर 2012 को शांतपरिणामों पूर्वक देहावसान हो गया।

2. भोपाल (म.प्र.) निवासी पण्डित राजमलजी का 90 वर्ष की आयु में दिनांक 3 जनवरी 2013 को शांतपरिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया। आपकी प्रेरणा से भोपाल में ब्रह्मचर्याश्रम की स्थापना हुई। आप नियमित रूप से दोनों समय चौक मन्दिर में प्रवचन करते थे। भोपाल मुमुक्षु मण्डल द्वारा संचालित गतिविधियों में आपका महत्वपूर्ण मार्गदर्शन रहता था।

3. विदिशा (म.प्र.) निवासी पण्डित जवाहरलालजी बड़कुल का दिनांक 14 जनवरी को शांतपरिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया। आप अत्यंत स्वाध्यायी थे। आप द्रव्यानुयोग गर्भित करणानुयोग का विशेष अध्ययन करते थे। आप कुन्दकुन्द कहान तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट के ट्रस्टी भी थे।

ज्ञातव्य है कि आपके दो पौत्र चिन्मय जैन बड़कुल एवं अनुराग जैन बड़कुल टोडरमल महाविद्यालय में अध्ययन कर चुके हैं।

4. अजमेर (राज.) निवासी स्व. श्री बालचन्दजी लुहाड़िया करांची वाले के ज्येष्ठ सुपुत्र श्री पूनमचंदजी लुहाड़िया का 85 वर्ष की आयु में दिनांक 4 जनवरी 2013 को शांतपरिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया। आप जिनधर्म के संस्कारों से ओतप्रोत थे। आपने जिनधर्म की प्रभावना व जिनवाणी के प्रचार-प्रसार में ही अपना जीवन समर्पित किया। आपकी भावना के फलस्वरूप अजमेर में **श्री सीमंधर जिनालय** तथा **ऋषभायतन अध्यात्मधाम** जैसे सुन्दर जिनालयों का निर्माण हुआ। आप अनेक संस्थाओं के संचालक एवं संस्थापक रहे। आपके निधन के अवसर पर टोडरमल स्मारक भवन में शोक सभा रखी गई। ज्ञातव्य है कि आपकी ओर से श्री टोडरमल दि.जैन सिद्धांत महाविद्यालय जयपुर में विद्यार्थियों के अध्ययन हेतु 4 लाख रुपये प्रतिवर्ष प्राप्त होते हैं।

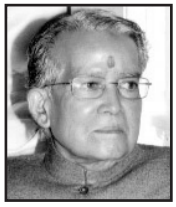

5. सोलापुर (महा.) निवासी पण्डित अनंतराज बालकृष्ण तुपकर का 86 वर्ष की आयु में दिनांक 27 नवम्बर को शांतपरिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया। आप अत्यंत स्वाध्यायी थे। टोडरमल स्मारक से आपको विशेष अनुराग था।

6. देऊलगांव राजा-वाशिम (महा.) निवासी श्री पद्मकुमार चैतनलाल डोणगांवकर का 80 वर्ष की आयु में दिनांक 28 दिसम्बर को देहावसान हो गया। आपकी स्मृति में जैनपथप्रदर्शक एवं वीतराग-विज्ञान हेतु 300-500/-रुपये प्राप्त हुये।

दिवंगत आत्मायें चतुर्गति के दु:खों से छूटकर शीघ्र ही अनंत सुख को प्राप्त करें - यही मंगल भावना है।

पुन: प्रकाशन

पण्डित टोडरमलजी द्वारा लिखित एवं डॉ. उज्ज्वला शहा द्वारा हिन्दी अनुवादित सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड एवं अर्थसंदृष्टि का पुन: प्रकाशन किया गया है। इस पुस्तक के कुल पृष्ठ 1060 एवं मूल्य 175 रुपये (पोस्टेज सहित) है। प्राप्ति स्थान एवं संम्पर्क - पण्डित दिनेशभाई शहा, 157/9, निर्मला निवास, सायन (पूर्व), मुम्बई-400022 फोन - 022-24073581

करणानुयोग शिविर

देवलाली-नासिक (महा.) में दिनांक 1 से 6 मार्च 2013 तक डॉ. उज्ज्वला शहा द्वारा करणानुयोग शिविर में कक्षाओं का लाभ प्राप्त होगा। इस शिविर में सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका जीवकाण्ड भाग 1 और 2 तथा जैन भूगोल पुस्तकों के आधार से विषय चलेगा। सभी साधर्मी भाई अवश्य लाभ लें।

शीतकालीन शिविर संपन्न

पोन्नूर हिल (तमिलनाडु) : यहाँ आचार्य कुन्दकुन्द जैन संस्कृति सेन्टर के तत्त्वावधान में दिनांक 24 से 26 दिसम्बर तक शीतकालीन शिविर का आयोजन किया गया।

इस शिविर में श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय के स्नातक पण्डित जम्बूकुमारजी शास्त्री, पण्डित उमापतिजी शास्त्री, पण्डित जयराजजी शास्त्री, पण्डित पद्मकुंवर नाभिराजनजी शास्त्री, पण्डित बाबू शास्त्री, पण्डित जयकुमारजी शास्त्री आदि विद्वानों द्वारा बालबोध पाठमाला, वीतराग-विज्ञान पाठमाला, तत्त्वज्ञान पाठमाला एवं गुणस्थान विवेचन की कक्षाओं का लाभ मिला।

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो - वीडियो प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें-
वेबसाईट - www.vitragvani.com
संपर्क सूत्र-श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph. : 022-26130820, 26104912, E-Mail - info@vitragvani.com

प्रकाशन तिथि : 13 जनवरी 2013

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
सह-सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा**, एम.ए. द्वय (जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन; इतिहास), नेट, एम.फिल (जैन दर्शन)
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
E-Mail : ptstjaipur@yahoo.com **फैक्स :** (0141) 2704127